[2012] 10 एस. सी. आर. 847

कनवर सिंह मीना

बनाम

राजस्थान राज्य व अन्य

(आपराधिक अपील संख्या 1662/ 2012)

16 अक्टूबर, 2012

[आफताब आलम और रंजना प्रकाश देसाई, न्यायाधीशगण]

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 एस 439(2)- जमानत रद्द करना-के लिए विचार-अभिनिर्धारितः प्राथमिक विचार यह है कि क्या अभियुक्त द्वारा साक्ष्य के साथ छेडछाड करने की संभावना है क्या प्रथम दृष्टया मामले को इंगित करने वाली सुसंगत तथ्यों को अनदेखा करते हुए जमानत दी गयी थी या क्या असंगत तथ्यों पर जमानत दी गयी थी-तथ्यों पर, अभियुक्त के मुकदमा प्रथम दृष्टया मामले का संकेत देने वाले सुसंगत तथ्य को अनदेखा करते हुए और इस तथ्य की अनदेखी करते हुए कि क्या अभियुक्त का भाई, एक आईपीएस अधिकारी, जो अन्वेषण को प्रभावित कर रहा था। जमानत आदेश पारित किया गया। एक विभत्स अपराध में, उच्च न्यायालय ने मनमाने और आकस्मिक तरीके से जमानत देने के लिए अपने विवेक का प्रयोग किया-जमानत आदेश गंभीर दुर्बलताओं से ग्रसित है और इसलिए कानूनी रूप से मान्य नहीं है।

प्रत्यर्थी क्रमांक 2 अभियुक्त और पांच अन्य के विरुद्घ आपराधिक प्रकरण अंतर्गत धारा 147, 148, 149, 364 और 302 भा.दं.सं. दर्ज किया गया था। उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी क्रमांक 2- अभियुक्त को जमानत पर रिहा कर दिया। अपीलकर्ता-शिकायतकर्ता ने जमानत आदेश के मुकदमा यह अपील दायर की है। शिकायतकर्ता ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने उन सिद्घांतों की अनदेखी करते हुए अभियुक्त को जमानत पर रिहा कर दिया जो न्यायालय को जमानत देने के लिए विवेक का प्रयोग करने में मार्गदर्शन करते है और मामले में जांच एजेंसी द्वारा एकत्र किये गये महत्वपूर्ण साक्ष्य और इस तथ्य को भी नजरअंदाज कर दिया गया कि अभियुक्त का भाई एक आईपीएस अधिकारी था और जांच को प्रभावित कर रहा था।

न्यायालय ने अपील का निपटारा करते हुए अभिनिर्धारितः 1.1 धारा 439 द.प्र.सं. जमानत के संबंध में उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय को बहुत व्यापक शक्तियां प्रदान करता है लेकिन, जमानत देते समय उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय अन्य अदालतों की तरह ही विचारों द्वारा मार्गदर्शित होते है। अर्थात अपराध की गंभीरता, साक्ष्य का चरित्र,

पीडित और साक्षियों के संदर्भ में अभियुक्त की स्थिति और अभियुक्त के न्याय से भागने और अपराध को दोहराने की संभाव्यता, उसके छेड़छाड़ की संभावना साक्षियों के साथ और न्याय के कार्यवाही में बाधा डालने और ऐसे अन्य आधारों पर विचार करने की आवश्यकता है। प्रत्येक आपराधिक मामला अपने विशिष्ट तथ्यात्मक परिदृश्य प्रस्तुत करता है और इसलिए, किसी विशेष मामले में विशिष्ट आधारों को न्यायालय द्वारा ध्यान में रखना पड़ सकता है। न्यायालय को केवल यह राय देनी है कि अभियुक्त के मुकदमा प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं। न्यायालय को पुलिस द्वारा एकत्र किये साक्ष्यों की सूक्ष्म जांच नहीं करनी चाहिए और न ही उस पर टिप्पणी करनी चाहिए। साक्ष्यों के इस तरह के मूल्यांकन और समय से पहले की गयी टिप्पणियां से अभियुक्त को निष्पक्ष सुनवाई से वंचित होने की संभावना है।

1.2) धारा 439(2) द.प्र.सं. के अंतर्गत जमानत रद्द करते हुए। प्राथमिक विचार जो न्यायालय पर निर्भर करता है कि क्या अभियुक्त द्वारा साक्ष्यों के साथ छेड़छाड़ करने या न्याय की उचित प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने या हस्तक्षेप करने का प्रयास करने या न्याय की उचित कार्यवाहियों से बचने की संभावना है। उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय उन मामलों में भी जमानत रद्द कर सकता है जहां जमानत देने का आदेश गंभीर दुर्बलताओं से ग्रस्त है जिसके परिणामस्वरूप न्याय की हानि होती है। यदि जमानत देने वाली न्यायालय प्रथम दृष्टया अभियुक्त की संलिप्तता का संकेत देने वाली सुसंगत तथ्य को नजरअंदाज करती है या असंगत तथ्य को ध्यान में रखती है, जिसका अभियुक्त को जमानत देने के सवाल से कोई प्रासंगिकता नहीं है, तो उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय द्वारा जमानत रद्द करना उचित होगा। इस तरह के आदेश जमानत देने की शक्ति में अंतर्निहित सर्वमान्य एवं सिद्घांतों के मुकदमा है।

ऐसे आदेश कानूनी रूप से कमजोर व असुरक्षित है, जिसके कारण न्याय में बाधा आ रही है और पर्यवेक्षण परिस्थितियों की अनुपस्थिति जैसे कि अभियुक्त की साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने की प्रवृत्ति, न्याय से भागने की प्रवृत्ति आदि न्यायालय को जमानत रद्द करने से नहीं रोक पायेगी। उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय ऐसे जमानत आदेश को रद्द करने के लिए बाध्य है, खासकर जब वे जघन्य अपराधों में शामिल अभियुक्तों को रिहा करते है क्योंकि वे अंततः अभियोजन पक्ष को कमजोर करते है और समाज पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है। जमानत देने या रद्द करने के मामले में उच्चतम न्यायालय उपरोक्त सिद्घांतों द्वारा समान रूप से मार्गदर्शित होता है।

2. न्याय के हित में, अभियुक्त को जमानत देने का अपेक्षित आदेश रद्द किये जाने योग्य है। उच्च न्यायालय द्वारा सुसंगत तथ्य को नजरअंदाज करते हुए जघन्य अपराध में शामिल अभियुक्तों को जमानत पर रिहा करने का आदेश कानूनी रूप से मान्य है। ये गंभीर दुर्बलताओं से ग्रस्त है। उच्च न्यायालय ने अपनी विवेकाधिकार का प्रयोग मनमाने और आकस्मिक तरीके से किया है। दोनों साक्षियों के कथन सुसंगत प्रतीत होते है क्योंकि वे प्रथम दृष्टया संबंधित अपराध में आरोपियों की संलिप्तता का संकेत देते है । उच्च न्यायालय को उन बयानों को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए था। उच्च न्यायालय ने इस पर कोई राय व्यक्त नहीं की है कि वे अभियुक्त को जमानत पर क्यों रिहा कर रहा है। ऐसा करना उच्च न्यायालय के लिए जरूरी था एक डायरी प्रविष्टि से संकेत मिला है कि अभियुक्त के भाई ने जांच एजेंसी पर दबाव बनाने की कोशिश की है। इस न्यायालय में दायर अपने शपथ पत्र में अतिरिक्त पुलिस उपायुक्त ने पुष्टि की है कि अभियुक्त ने जांच को प्रभावित करने का प्रयास किया था। अभियुक्त का भाई आईपीएस अधिकारी है, इस तथ्य पर उच्च न्यायालय ने ध्यान नहीं दिया। यह मानते हुए भी कि अभियुक्त के न्याय से भागने की संभावना नहीं है या जमानत पर रिहा होने के बाद उसे साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने की कोशिश नहीं की है, एक भयानक अपराध में शामिल अभियुक्त को जमानत पर रिहा करने के लिए विवेक के मनमाने प्रयोग में कानूनी रूप से कमजोर व अस्थिर आदेश पारित किया जाना चाहिए। जमानत स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है। आदेश को सुधारने की आवश्यता है क्योंकि ये बुरा उदाहरण बनेगा। साथ ही विचारण पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

गुरूचरण सिंह व अन्य आदि बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन) **(1978)1 एससीसी 118: 1978(2)एससीआर 358, पूरन बनाम रामविलास और अन्य। (2001)6 एससीसी 338: 2001(3)एससीआर 432**, दिनेश एम.एन. (एस.पी.)बनाम गुजरात राज्य **(2008)5 एससीसी 66: 2008 (6)एससीआर 1134** पर भरोसा किया।

दौलतराम बनाम हरियााणा राज्य **(1965)1 एससीसी 349: 1994 (6)पूरक। एससी आर 69-संदर्भित।**

केस कानून संदर्भ

1978(2) एससीआर 358	संदर्भित	पैरा 7
2001(3) एससी आर 432	संदर्भित	पैरा 8
1994(6) सपल. एससी आर 69	संदर्भित	पैरा 8
2008(6) एससी आर 1134	संदर्भित	पैरा 9

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः 2012 की आपराधिक अपील संख्या 1662।

राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ, जयपुर के एस.बी. में दिनांक 19.08.2011 के निर्णय एवं आदेश से। आपराधिक विविध. 2011 की जमानत आवेदन संख्या 7452

लेखराज राहिला (वरिन्दर कुमार शर्मा)अपीलार्थी

यू.यू. ललित, अजय वीर सिंह जैन, अतुल अग्रवाल, प्रवीण जी अग्रवाल, अजय सरोया, मुनव्वर नसीम, संचित धवन, सिद्घार्थ अरोरा, निशा मोहन दास

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

श्रीमती रंजना प्रकाश देसाई,न्यायाधीश 1. अनुमति ।

2. अपीलकर्ता पूर्ण सिंह मीना का भाई है। 20.05.2009 को, उन्होंने पूर्ण सिंह मीना (मृतक) की हत्या के संबंध में खुशीराम मीना, जो यहां प्रत्यर्थी क्रमांक 2 है और पांच अन्य के मुकदमा गांधी नगर पुलिस स्टेशन, जिला जयपुर शहर (पूर्व) में शिकायत दर्ज करायी, जो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 147, 148, 149, 364 और 302 (आईपीसी) के अंतर्गत दर्ज किया गया था। अपेक्षित आदेश के अनुसार, राजस्थान उच्च न्यायालय ने खुशीराम मीना (अभियुक्त) को जमानत पर रिहा कर दिया गया। अपीलकर्ता ने अपील में इस आदेश को चुनौती दी है।

3. अपीलकर्ता की शिकायत, जैसा कि उनके वकील लेखराज लेहरिया ने कहा है, उच्च न्यायालय ने अभियुक्त को जमानत पर रिहा करने में गंभीर त्रुटि की है। उनके अनुसार उच्च न्यायालय ने उन सुस्थापित सिद्घांतों की अनदेखी की है जो अदालतों को जमानत देने के लिए अपने विवेक का प्रयोग करने में मार्गदर्शन करते है अन्य बातों के साथ साथ यह भी तर्क दिया गया कि उच्च न्यायालय ने जांच एजेंसी द्वारा एकत्र किये गये अत्यंत महत्वपूर्ण साक्ष्य को नजरअंदाज कर दिया और बिना कोई कारण बताये अभियुक्त को जमानत पर रिहा कर दिया। उच्च न्यायालय इस बात पर गौर करने में विफल रहा कि अभियुक्त के मुकदमा प्रथम दृष्टया मामला से अधिक है और अभियुक्त का भाई, जो एक आईपीएस अधिकारी है जांच अधिकारियों पर दबाव बनाने की कोशिश कर रहा है। यह प्रस्तुत किया गया है कि उच्च न्यायालय के आदेश को विकृत होने के कारण रद्द किया जाना चाहिए और अभियुक्त को हिरासत में लेने का निर्देश दिया जाना चाहिए।

4. श्री अजय वीर सिंह, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता-राज्य ने अपीलकर्ता का समर्थन किया। उन्होंने अपील दलीलों के समर्थन में श्री योगेश दाधीच, अतिरिक्त पुलिस उपायुक्त, जयपुर शहर (पूर्व), जयपुर के शपथ पत्र पर भरोसा किया। उन्होंने हमारा ध्यान संबंधित

स्टेशन डायरी के एक उदाहरण की ओर भी आकर्षित किया कि जो यह बताता है कि अभियुक्त के भाई ने जांच एजेंसी पर दबाव बनाने की कोशिश की थी।

5. श्री यू.यू.ललित अभियुक्त की ओर उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ललित ने कहा कि हालांकि उच्च न्यायालय ने अभियुक्त को जमानत पर रिहा करने का कोई कारण नहीं बताया लेकिन उसने मामले की विभिन्न महत्वपूर्ण विशेषताओं का संदर्भ दिया।

उच्च न्यायालय ने अनुसरण किया है कि एक न्यायालय ने कहा है कि पुलिस को 20-05-2009 को सुबह 06:10 बजे मोबाइल पर सूचना मिली थी, हालांकि तुरंत कोई एफआईआर दर्ज नहीं की गयी, दोपहर 03:15 बजे एफआईआर दर्ज की गयी। 20.05.2009 को, हालांकि जांच 05.06.2009 को सी आई डी को स्थानांतरित कर दी गयी थी फिर भी वही अधिकारी निरंतर जांच करता रहा और 10.06.2009 को आपराधिक प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में संहिता) की धारा 164 के अंतर्गत साक्षियों के कथन दर्ज किये, जब मामले की जांच सीआईडी द्वारा की गयी, तो जांच की तथ्यात्मक रिपोर्ट संदीप सिंह और राजेश शर्मा द्वारा प्रस्तुत की गयी, जिससे पता चलता है कि अभियुक्त इस मामले में शामिल नहीं था। जांच के अनुसार अभियुक्त के मोबाइल की लोकेशन सीकर में थी और विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को भगोड़ा घोषित करने के लिए जांच एजेंसी द्वारा दायर आवेदन को खारिज कर दिया था। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य पर भी विचार किया कि अन्य सहअभियुक्तों को उच्च न्यायालय द्वारा जमानत पर रिहा कर दिया गया है। वकील ने प्रस्तुत किया कि उपरोक्त सभी महत्वपूर्ण विशेषताओं को ध्यान में रखने के बाद विवादित आदेश पारित किया गया था और इसलिए, ये नहीं कहा जा सकता कि इसमें विवेक का कोई गैरप्रयोग किया गया है। वकील ने कहा कि उपरोक्त प्रत्येक परिस्थिति बहुत प्रासंगिक है और अभियुक्त को गलत फंसाने का मामला बनता है। वकील ने बताया कि रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे पता चले कि जमानत पर रिहा होने के बाद अभियुक्त ने पुलिस पर दबाव बनाने की कोशिश की थी। इस न्यायालय में पेश की गयी डायरी प्रविष्टि पहले की अवधि से संबंधित है। वकील ने कहा कि अभियुक्त काफी समय से जमानत पर है। ये देखने के लिए रिकॉर्ड पर कुछ भी नहीं है कि उसने साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने की कोशिश की है या उसने न्याय प्रशासन के कार्य में बाधा डाली है इसलिए उसकी जमानत रद्द करना अनुचित होगा।

6. जमानत रद्द करना गंभीर मामला है। एक बार दी गयी जमानत केवल उन परिस्थितियों में और उन कारणों से रद्द की जा सकती है जो इस न्यायालय द्वारा निर्णयों

की श्रंखला में स्पष्ट रूप से बताये गये हैं। प्रतिद्वंदी तर्कों से निपटने से पहले उनमें से कुछ का उल्लेख करना उचित होगा।

7. गुरूचरण सिंह और अन्य आदि बनाम राज्य (दिल्ली) में प्रशासन, अपीलकर्ता गुरूचरण, जो पुलिस अधीक्षक थे, पर अन्य पुलिसकर्मियों के साथ आईपीसी की धारा 302 सहपठित धारा 120बी के अंतर्गत आरोप लगाया गया था। प्रारंभिक जांच के दौरान 6 कथित चक्षुदर्शी साक्षी है जो पुलिसकर्मी थे, ने अभियोजन मामले का समर्थन किया। हालांकि, जांच के दौरान एफआईआर दर्ज होने के बाद, उक्त 6 पुलिसकर्मियों सहित 7 साक्षियों ने अपीलकर्ता गुरूचरण सिंह को दोषी ठहराते हुए कथन दिये। एक चश्मदीद ए.एस.आई. गोपालदास ने अभियोजन पक्ष के पक्ष में संहिता की धारा 164 के अंतर्गत एक कथन दिया। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अपीलकर्ता गुरुचरण सिंह को ये देखने के बाद जमानत पर रिहा कर दिया कि गवाह के साथ छेड़छाड़ करने से उन्हें कोई फायदा नहीं होगा, जिन्होंने विरोधाभासी कथन देकर पहले ही अपने साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ की थी। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने आगे कहा कि संपूर्ण तथ्य की समीक्षा करने के बाद उनकी राय थी कि अपीलकर्ता गुरुचरण सिंह के न्याय से भागने या साक्षियों के साथ छेड़छाड़ करने की बहुत कम संभावना है। उन्होंने कहा कि साक्ष्य की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए जमानत देने के इच्छुक है। अभियोजन पक्ष ने उक्त आदेश को रद्द करने के लिए संहिता की धारा 439(2) के अंतर्गत उच्च न्यायालय का रुख किया। उच्च न्यायालय ने अन्य बातों के साथ साथ कहा कि अपराध की प्रकृति और साक्ष्य की प्रकृति, साक्षियों के साथ छेड़छाड़ की उचित आशंका और अन्य सभी सुसंगत कारकों को देखते हुए, उसके पास जमानत रद्द करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। उच्च न्यायालय ने पाया कि विद्वान सत्र न्यायाधीश ने सुसंगत मान्यता प्राप्त सिद्घांतों पर अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग नहीं किया। उक्त आदेश के मुकदमा इस न्यायालय में अपील की गयी थी। इस न्यायालय ने पाया कि संहिता की धारा 439(1) के अंतर्गत उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय की शक्तियां जमानत के संबंध में उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय के अलावा किसी अन्य न्यायालय को परिदत्त शक्तियों से कहीं अधिक व्यापक है। हालांकि, कुछ बातें जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए, सभी अदालतों में समान है। इस न्यायालय ने कहा कि जिन परिस्थितियों में अपराध किया गया है उनकी गंभीरता, स्थिति और पीड़ित और साक्षियों के संदर्भ में अभियुक्त की स्थिति; अभियुक्त ने न्याय से भागने की संभावना; अपराध दोहराने का; मामले में संभावित दोषसिद्घी की गंभीर संभावना का सामना करते हुए अपने स्वयं के जीवन को खतरे में डालना; साक्षियों के साथ छेड़छाड़ का; मामले के इतिहास के साथ साथ इसकी जांच और ऐसे

अन्य सुसंगत आधारों को भी ध्यान में रखना होगा। यह सुनिश्चित करने के लिए कि अभियुक्त के मुकदमा प्रथम दृष्टया मामला है या नहीं, साक्ष्य की प्रकृति पर विचार करना होगा। सत्र न्यायालय द्वारा प्रयोग किये गये विवेक के साथ साथ उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय के मामले की योग्यता पर सत्र न्यायालय द्वारा की गयी अनुचित समय पूर्व टिप्पणियों के बारे में अपनी नाराजगी व्यक्त की, जब उस स्तर पर केवल इस बात पर विचार करने के लिए कहा गया था कि क्या प्रथम दृष्टया अभियुक्त के मुकदमा प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं। इस न्यायालय ने विशेष रूप से ए.एस.आई. गोपालदास के कथन का हवाला दिया, जो संहिता की धारा 164 के अंतर्गत दर्ज किया गया था और पाया कि इस गवाह ने पहले कोई विरोधाभासी कथन नहीं दिया था और उस चरण में उसके कथन पर अविश्वसनीयता का दाग नहीं लगाया जा सकता था जैसे कि सत्र न्यायालय द्वारा किया गया था। इस न्यायालय ने पाया कि सत्र न्यायालय कानूनी स्थिति में नहीं था कि मुकदमे में चश्मदीद साक्षियों की जांच होने तक अभियुक्तों के मुकदमा कोई ठोस सबूत दर्ज नहीं किया गया था। इस तथ्य को गंभीरता से लिया गया कि सत्र न्यायालय ने सुसंगत विचारों पर अपना ध्यान केंद्रित नहीं किया था। सत्र न्यायाधीश के दृष्टिकोण को गंभीर दुर्बलता से पीड़ित के रूप में देखा गया और जमानत रद्द करने का समर्थन किया गया।

8. पूरन बनाम रामविलास और अन्य में, अपीलकर्ता पर आईपीसी की धारा 498-ए और 304-बी के अंतर्गत आरोप लगाया गया था। अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश नागपुर ने अपीलकर्ता को जमानत पर रिहा कर दिया। उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता को दी गयी जमानत रद्द कर दी, उक्त आदेश इस न्यायालय के समक्ष चुनौती के अधीन था। यह तर्क दिया गया कि प्रारंभिक चरण में अजमानती मामले में जमानत की अस्वीकृति और पहले से दी गयी जमानत को रद्द करने पर अलग-अलग आधार पर विचार और निपटान किया जाना चाहिए। पहले से दी गयी जमानत को रद्द करने का निर्देश देने के लिए आदेश के लिए ठोस और जबरदस्त परिस्थितियां आवश्यक है। यह तर्क दिया गया कि आमतौर पर जमानत रद्द करने का आधार मोटे तौर पर न्याय के मार्ग में हस्तक्षेप करने का प्रयास या न्याय के मार्ग से बचने का प्रयास या किसी भी तरीके से अभियुक्त को दी गयी रियायत का दुरूपयोग है। इस निवेदन के समर्थन में दौलतराम बनाम हरियाणा राज्य पर आश्रय रखा गया। इस न्यायालय ने पाया कि दौलतराम मामले में यह स्पष्ट किया गया था कि उपरोक्त उदाहरण केवल उदाहरणात्मक है और संपूर्ण नहीं है और जमानत रद्द करने का एक ऐसा आधार होगा जहां रिकॉर्ड पर साक्ष्य और साक्ष्य की अनदेखी करते हुए एक जघन्य अपराध में

जमानत देने का विकृत आदेश पारित किया जाता है और वो भी बिना कोई कारण बताये इस न्यायालय ने कहा कि ऐसा आदेश कानून के सिद्घांतों के मुकदमा होगा और न्याय के हित में ये आवश्यक होगा कि इस तरह के विकृत आदेश को रद्द कर दिया जाए और जमानत रद्द की जाए। इस न्यायालय ने पाया कि चूंकि सत्र न्यायालय ने जमानत देते समय महत्वपूर्ण तथ्यों की अनदेखी की थी, इसलिए उच्च न्यायालय ने जमानत रद्द कर दी थी। आगे देखा गया कि जघन्य अपराधों में पारित ऐसे आदेशों का समाज पर गंभीर प्रभाव पड़ेगा और विचारण न्यायालय द्वारा विवेक के मनमाने और गलत प्रयोग को सुधारना होगा।

9. दिनेश एम.एन. मे.(एस.पी.) बनाम गुजरात राज्य में अपीलकर्ता- एक पुलिस अधिकारी फर्जी मुठभेड़ के मामले में शामिल था। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने उन्हें जमानत पर रिहा कर दिया। जमानत आदेश से यह स्पष्ट था कि विद्वान सत्र न्यायाधीश इस तथ्य से प्रभावित थे कि मृतक एक खतरनाक अपराधी था, जिसके मुकदमा 25 एफआईआर दर्ज की गयी थी। संहिता की धारा 439(2) के अंतर्गत जमानत रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दायर किया गया था। उच्च न्यायालय ने यह कहते हुए जमानत रद्द कर दी कि सत्र न्यायाधीश ने उस अपराध की गंभीरता को ध्यान में नहीं रखा जिसमें उच्च पदस्थ पुलिस अधिकारी शामिल था। ये देखा गया कि मृतक का पिछला आचरण या पूर्ववृत अभियुक्त को जमानत देने का आधार नहीं रहना चाहिए। इस न्यायालय ने उक्त आदेश की चुनौती से निपटते हुए कहा कि हालांकि ये सच है कि जमानत देने और जमानत रद्द करने के मापदंड अलग-अलग है, अगर विचारण न्यायालय जमानत देते समय असंगत तथ्यों पर कार्य करता है, तो जमानत रद्द की जा सकती है। ये देखा गया है कि जमानत आदेश की विकृति इस तथ्य से उत्पन्न हो सकती है कि असंगत तथ्यों को जमानत देने के आदेश में भेद्यता जोड़ने पर विचार किया गया है। मामले के तथ्यों पर, इस न्यायालय ने माना कि मृतक की संदिग्ध प्रतिष्ठा और आपराधिक पृष्ठभूमि थी, निश्चित रूप से ऐसा कोई कारक नहीं था जिसे अभियुक्त को जमानत देते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए था। यह अभियुक्त द्वारा किये गये कृत्य की प्रकृति थी जिस पर विचार किया जाना चाहिए था। उच्च न्यायालय के आदेश की पुष्टि इस आधार पर की गयी कि जमानत अप्रतिरक्ष्य आधार पर दी गयी थी। इस तथ्य को इस न्यायालय ने खारिज कर दिया कि साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ का प्रयास और जांच में हस्तक्षेप जैसी निगरानी संबंधी परिस्थितियां अनुपस्थित थी और इसलिए, साक्ष्य का दोबारा विश्लेषण करके जमानत रद्द नहीं की जा सकती थी।

10. इस प्रकार, संहिता की धारा 439 जमानत के संबंध में उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय को बहुत व्यापक शक्तियां प्रदान करती है। लेकिन, जमानत देते समय, उच्च न्यायालय और सत्र न्यायालय अन्य अदालतों की तरह ही विचारों द्वारा मार्गदर्शित होते है। कहने का तात्पर्य यह है कि, अपराध की गंभीरता, साक्ष्य का चरित्र, पीड़ित व साक्षियों के संदर्भ में अभियुक्त की स्थिति, अभियुक्त के न्याय से भागने और अपराध को दोहराने की संभावना, उसकी साक्ष्यों से छेड़छाड़ की संभावना और न्याय के मार्ग में बाधा डालने तथा ऐसे अन्य आधारों पर विचार करने की आवश्यकता है। प्रत्येक आपराधिक मामला अपनी विशिष्टिता प्रस्तुत करता है। तथ्यात्मक परिदृश्य और इसलिए, किसी विशेष मामले के लिए विशिष्ट कुछ आधारों को न्यायालय द्वारा ध्यान में रखना पड़ सकता है। न्यायालय को केवल यह अभिमत देना है कि अभियुक्त के मुकदमा प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं। न्यायालय को पुलिस द्वारा एकत्र किये गये साक्ष्य की सूक्ष्म जांच नहीं करनी चाहिए और न ही उस पर टिप्पणी करनी चाहिए। साक्ष्य का ऐसा आंकलन और समयपूर्व टिप्पणियों अभियुक्त को निष्पक्ष सुनवाई से वंचित कर सकती है। संहिता की धारा 439(2) के अंतर्गत जमानत रद्द करते समय, न्यायालय के सामने प्राथमिक विचार यह है कि क्या अभियुक्त ने साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने या न्याय की उचित कार्यवाहियों में हस्तक्षेप करने या हस्तक्षेप करने का प्रयास करने की संभावना है या नहीं। उन मामलों में भी जमानत रद्द करने जहां जमानत देने वाली न्यायालय प्रथम दृष्टया अभियुक्त की संलिप्तता का संकेत देने वाली सुसंगत तथ्यों को नजरअंदाज करती है या असंगत तथ्यों को ध्यान में रखती है, जिसका अभियुक्त को जमानत देने के सवाल से कोई प्रासंगिकता नहीं है, तो उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय द्वारा जमानत रद्द करना उचित होगा। ऐसे आदेश जमानत देने की शक्ति में अंतर्निहित सर्वमान्य सिद्घांतों के विरुद्घ है। इस तरह के आदेश कानूनी रुप से कमजोर और असुरक्षित है, जिससे न्याय में बाधा उत्पन्न होती है और पर्यवेक्षण परिस्थितियों की अनुपस्थिति जैसे की अभियुक्त की साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने की प्रवृत्ति, न्याय से भागने की प्रवृत्ति आदि अदालतों को जमानत रद्द करने से नहीं रोक पायेगी। उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय ऐसे जमानत आदेशों को रद्द करने के लिए बाध्य है खासकर जब वे जघन्य अपराध में शामिल अभियुक्तों को रिहा करते है क्योंकि वे अंततः अभियोजन पक्ष को कमजोर करते है और समाज पर प्रतिकूल प्रभाव डालते है । कहने की जरुरत नहीं है कि हालांकि इस न्यायालय की शक्तियां बहुत व्यापक है, ये न्यायालय जमानत देने या रद्द करने के मामले में उपरोक्त सिद्घांतों द्वारा समान रूप से मार्गदर्शित होती है।

11. अब मामलों के तथ्यों पर संक्षेप में गौर करना जरुरी है अपीलकर्ता द्वारा दर्ज करायी गयी शिकायत में कहा गया है कि 19.05.2009 को मृतक शाम को करीब 7 बजे उसके घर आया। मृतक को एक फोन कॉल आने के बाद, उसने अपीलकर्ता से कहा कि उसे किसी से पैसे लेने हैं और उसे अपनी बाईक से गांधीनगर छोड़ने के लिए कहा। तद्नुसार, उसने मृतक को रात 12.00 बजे जनता स्टोर के पास जो श्याम हवंस पैरेडाईज अपार्टमेंट्स के सामने, गांधीनगर के पास छोड़ दिया। मृतक ने उससे कहा कि वह अगली सुबह वापस आएगा। चूंकि मृतक वादे के मुताबिक वापस नहीं आया, इसलिए अपीलकर्ता सुबह करीब 11 बजे श्याम हवांस पैरेडाइज अपार्टमेंट के पास पड़ावा पहुंचे और मृतक के बारे में पूछताछ की। चौकीदार कुलदीप प्रजापति ने उन्हें बताया कि फ्लैट नंबर 603 में रीता मैडम के साथ था और सुबह लगभग 6 बजे आरोपी, जो रीता मैडम से मिलता था, अपने 4-5 लोगों के साथ जीप नंबर आरजे-14-यूबी-294 से आया था। वे सभी फ्लैट नंबर 603 में चले; मृतक को पीटा, उसे फ्लैट के बाहर खींच लिया, जीप में डाल दिया और जीप में वहां से चले गये । इसके बाद उन्होंने मृतक की तलाश की, आखिरकार वह थाने पहुंचा और पुलिस को जानकारी दी। इसके बाद वह एसएमएस अस्पताल की मोर्चरी में गये। मोर्चरी में उन्होंने मृतक का शव देखा और उसकी पहचान की। अपीलकर्ता ने कहा कि उसे यकीन है कि मृतक की हत्या अभियुक्त और उसके सहभागियों द्वारा की गयी थी। इसी एफआईआर के आधार पर जांच शुरु की गयी।

12. जांच के दौरान दिनांक 10.06.2009 को न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी संख्या 15, जयपुर शहर, जयपुर द्वारा संहिता की धारा 164 के अंतर्गत श्याम हवांस पैरेडाइज अपार्टमेंट के चौकीदार कुलदीप प्रजापति और रीता के कथन दर्ज किये गये थे। इन कथनों की प्रतियों का हमने अवलोकन किया है। कुलदीप प्रजापति ने अन्य बातों के अलावा अपने कथन में कहा कि रीता 07.05.2009 को आर.पी.सिंह के श्याम हवांस पैरेडाइज अपार्टमेंट के फ्लैट नंबर 603 में रहने आयी थी। अभियुक्त उक्त फ्लैट पर हमेशा आता जाता था। 19.05.2009 को रात्रि लगभग 08:30 बजे उसे अभियुक्त का फोन आया। अभियुक्त ने उससे पूछा कि क्या रीता फ्लैट में थी तो उसने हां में जवाब दिया। उन्होंने आगे कहा कि 20.05.2009 को सुबह लगभग 6 बजे अभियुक्त 3-4 लोगों के साथ एक जीप में वहां आया। वह रीता के फ्लैट पर गया कुछ देर बाद रीता उसके पास आयी और बताया कि उसके घर में विवाद चल रहा है। वह रीता को लेकर ऊपर चला गया। उसने देखा कि अभियुक्त 3-4 लोगों के साथ एक व्यक्ति को घसीट रहे है। उसके पूछने पर अभियुक्त ने उसे बताया कि एक दुष्ट आदमी उसके फ्लैट में घुस आया है अभियुक्त ने उसे ये नहीं

बताया कि उस व्यक्ति को कहां ले जा रहा है उसने उस आदमी को जीप के अंदर डाला और ले गया।

13. संहिता की धारा 164 के अंतर्गत दर्ज किये गये अपने कथन में, रीता ने अन्य बातों के अलावा, कहा कि उसकी शादी रामगोपाल मीना नामक व्यक्ति के साथ हुई थी। रामगोपाल मीना विक्षिप्त हो गये और इसलिए उन्होंने उसका साथ छोड़ दिया। वह अपने माता-पिता के साथ रह रही थी। चूंकि उसका बड़ा भाई शराब का कारोबार करता था, इसलिए आरोपी, एक आबकारी अधिकारी, अक्सर उसके घर आता था। उसके अनुरोध पर वह उसके साथ रहने लगी। बाद में दोनों के बीच शारीरिक संबंध बन गये। अभियुक्त जहां भी तैनात रहा, उसने उसके लिए किराये के मकान में रहने की व्यवस्था की। जब वह दीपक कॉलोनी में रहती थी, तो वह मृतक के संपर्क में आई, जो दीपक कॉलोनी में रहता था। उसके और मृतक के बीच घनिष्ठ मित्रता विकसित हो गयी। रीता ने आगे कहा कि उसके और अभियुक्त के बीच विवाद हुआ। उसने कहा कि अभियुक्त को पता था कि वह मृतक के साथ रह रही है। मृतक की अनुपस्थिति में अभियुक्त उसके पास आया और उसे धमकी दी। उसने उससे कहा कि मैं मृतक के साथ न रहूं और घर खाली कर दे। उसने उससे मकान खाली करा लिया और गांधीनगर में किराये के मकान में रहने लगा। 19.05.2009 को अभियुक्त उसे लगातार टेलीफोन कॉल कर रहा था। आखिरी कॉल रात 11:30 बजे आया था। वह उसे धमकी दे रहा था और उससे पूछ रहा था कि मृतक के संपर्क में क्यों थी। मृतक सुबह करीब 05:30 बजे अपने फ्लैट पर आया। सुबह करीब 6 बजे जब वे चाय ले रहे थे, तभी अभियुक्त वहां आ गया। उसके साथ राय सिंह और दो अन्य लोग भी थे। उन दो अन्य व्यक्तियों ने उसे पकड़ लिया। उन्होंने उसे फ्लैट के बाहर धकेल दिया। उन्होंने दरवाजा बंद कर दिया, वे गार्ड कुलदीप प्रजापति को बुलाने नीचे चली गयी। उसने उसे बताया कि उसके फ्लैट में कुछ विवाद चल रहा है। जब वे दोनों ऊपर जा रहे थे तो उसने देखा कि चारों लोग मृतक को नीचे खींच रहे है। वह नहीं जानती थी कि मृतक को कहां ले जाया गया। उसने मृतक के भाई को बताया कि अभियुक्त उसे ले गये है। उन्होने निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्त राय सिंह, सुभाष और विजय ने मिलकर मृतक की हत्या की।

14. शिकायत के द्वारा और संहिता की धारा 164 के अंतर्गत दर्ज किये गये उपरोक्त दो बयानों से, यह प्रथम दृष्टया प्रतीत होता है कि अभियुक्त और रीता के बीच अवैध संबंध थे। हालांकि, रीता मृतक के संपर्क में आयी और दोनों के बीच घनिष्ठ संबंध बन गये, जो अभियुक्त को पसंद नहीं था। जांच एजेंसी का यह मामला प्रतीत होता है कि, इसलिए अभियुक्त ने अपने साथियों की मदद से मृतक को मार डाला।

15. इस स्तर पर, हम अभियोजन पक्ष द्वारा एकतर किये गये साक्ष्य की विश्वसनीयता या अन्यथा पर टिप्पणी नहीं करना चाहते है। क्या कुलदीप प्रजापति और रीता के कथन अंततः अभियोजन पक्ष को अपना मामला स्थापित करने में मदद करेंगे, ये केवल तभी पता लगाया जा सकता है जब मुकदमा समाप्त हो जाएगा। ये विचारण न्यायालय का कार्य है। इस स्तर पर साक्षियों पर गहराई से चर्चा करना अनुचित होगा क्योंकि इससे विचारण न्यायालय पर असर पड़ने की संभावना है इसलिए, हम ऐसा करने से बचते है। लेकिन, हमें यह स्पष्ट करना चाहिए कि संहिता की धारा 164 के अंतर्गत दर्ज किये गये कुलदीप प्रजापति और रीता के कथन प्रासंगिक प्रतीत होते है क्योंकि प्रथम दृष्टया संबंधित अपराध में आरोपियों की संलिप्तता का संकेत देते है। उच्च न्यायालय को उन बयानों को नजरअंदाज नहीं करना चाहिए था। ये सच है कि उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों के लिए अभियोजन मामले की कुछ विशेषताओं का उल्लेख किया है। उच्च न्यायालय ने उन सुविधाओं पर चर्चा नहीं की है इनसे इस बारे में कोई राय व्यक्त नहीं की है कि वे आरोपियों को जमानत पर क्यों रिहा नहीं कर रहे है। ऐसा करना उच्च न्यायालय के लिए जरुरी था। हमें एक प्रासंगिक डायरी प्रविष्टि से उदाहरण दिखाया गया है जो इंगित करता है कि अभियुक्त के भाई ने जांच एजेंसी पर दबाव बनाने की कोशिश की थी। इस न्यायालय में दायर अपने शपथ पत्र में जयपुर शहर (पूर्व) के अतिरिक्त पुलिस उपायुक्त, श्री योगेश दाधीच ने पुष्टि की है कि अभियुक्त ने जांच को प्रभावित करने का प्रयास किया था। अभियुक्त का भाई आईपीएस अधिकारी है, इस बात से उसके वकील ने इंकार नहीं किया है इस तथ्य पर उच्च न्यायालय का ध्यान नहीं है यदि जांच एजेंसी द्वारा इसे उच्च न्यायालय के संज्ञान में नहीं लाया गया तो यह कहना होगा कि जांच एजेंसी ने उच्च न्यायालय के समक्ष बहुत ही अनौपचारिक रवैया अपनाया। किसी भी स्थिति में, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त को रिहा करने का आदेश पारित किया गया। किसी जघन्य अपराध में शामिल अभियुक्त को तथ्य की अनदेखी कर जमानत पर रिहा कर दिया जाना कानूनी तौर पर मान्य नहीं है। यह गंभीर दुर्बलताओं से ग्रसित है। उच्च न्यायालय ने अपनी विवेकाधिकार का प्रयोग मनमाने और आकस्मिक तरीके से किया है। हमने यह भी देखा है कि घटना 19.05.2009 को हुई थी और अभियुक्त को 01.06.2011 को गिरफ्तार किया जा सका। अग्रिम जमानत पाने के उनके दो प्रयास, एक सत्र न्यायालय से और दूसरा उच्च न्यायालय से, सफल नहीं हुए। ये मानते हुए कि अभियुक्त के न्याय से भागने की संभावना नहीं है या जमानत पर रिहा होने के बाद उसने साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ करने की कोशिश नहीं की है ये कोई कारण नहीं है कि वे विवेक के मनमाने प्रयोग में कानूनी रूप से कमजोर और अस्थिर आदेश पारित किया गया। जमानत

पर जघन्य अपराध को कायम रहने दिया जाना चाहिए। इस आदेश को सुधारने की आवश्यकता है क्योकि ये एक बुरा उदाहरण बनेगा। साथ ही विचारण पर इसका प्रतिकूल असर पड़ेगा।

16. मामले का समस्त रूप से विचार करते हुए, हमारी राय यह है कि न्याय के हित में, अभियुक्त को जमानत देने का आदेश रद्द किया जाना चाहिए और पुलिस को अभियुक्त को हिरासत में लेने का निर्देश दिया जाना चाहिए। हमने प्रत्यर्थी 1-राजस्थान राज्य के विद्वान वकील से पूछताछ की कि मामले का प्रक्रम क्या है। हमें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि आज तक आरोप विरचित नहीं हुए हैं हमें लगता है कि इस मामले में अब और देरी नहीं होनी चाहिए। विचारण न्यायालय को आरोप विरचित करने और मुकदमा जल्द से जल्द पूरा करने का निर्देश दिया जाना चाहिए। इन परिस्थितियों में, अभियुक्त खुशीराम मीना को जमानत देने का दिनांक 19.08.2012 का आदेश रद्द किया जाता है। पुलिस को अभियुक्त खुशीराम मीना को हिरासत में लेने का निर्देश दिया गया है। विचारण न्यायालय को इस आदेश की प्राप्ति की तारीख के एक महीने की अवधि के भीतर आरोप विरचित करने का निर्देश दिया गया है। विचारण न्यायालय को निर्देश दिया जाता है कि वे अपने मामले को आगे बढ़ाए और इस जल्द से जल्द स्वतंत्र रूप से और कानून के अनुसार समाप्त करे, हमारे द्वारा की गयी किसी भी टिप्पणी से प्रभावित हुए बिना, जो मामले के गुणों को प्रभावित कर सकती है क्योंकि वे केवल प्रथम दृष्टया टिप्पणी है।

17. अपील का निपटारा उपरोक्त शर्तों के अनुसार किया जाता है।

के.के.टी. अपील निस्तारित

.एच

सुश्री सौम्या सिंह